बदलते रंग

जीवन की साँझ करीब जानकर कमलनाथ भार्गव ने भी एक नीड़ का निर्माण करना चाहा। नौकरी में रहते ही सैक्टर आठ चंदीगढ़ में जमीन ले ली थी। अब उसी पर दोनो पंछियों ने नीड़ बनवाना आरम्भ किया। बहुत चाव से सुमित्रा भी पति के साथ लगी रहती । वह अपने सारे अरमान पूरे कर रही थी। उनके दोनो बेटे ब्याह के पश्चात् नौकरी के सिलसिले में विदेश चले गए थे। दोनो बहुएं भी वहीं काम कर रही थीं। परिवार खुशहाल था।

आठ सैक्टर में केवल बड़ी – बड़ी कोठियाँ व बंगले ही बने हुए हैं। शासकीय बड़े ओहदों से सेवा – निवृत्त होकर बहुत से लोग यहीं बस गए हैं। आपस में सभी बराबर स्टेटस के हैं। अपनी बराबर की उम्रवालों के साथ भार्गव साहब भी वहीं मंदिर की संस्था के मेम्बर बन गए थे। सावित्री भी कीर्त्तन पर चली जाती थी। दोनो की अच्छी जान पहचान हो गई थी। संध्या समय सब सैर को भी जाते। दोनो अपने वर्त्तमान से अत्यंत संतुष्ट व प्रसन्न थे। वर्त्तमान परिस्थितियों को देखते हुए उनका दृष्टिकोण अपने आज को भरपूर जीने में विश्वास रखता था। दोनो को बच्चों के बिना रहने का मलाल रत्ती भर भी नहीं था।

बड़े बेटे शिवम् ने फोन पर माँ– पिताजी को बताया कि उनकी बहू सावी उम्मीद से है। सुनते ही दोनो की उम्मीदों को कल्पना के पंख लग गए। अभी तो दोनो नए घर को जी भर के सजा भी नही पाए थे कि अमेरिका जाने की तैय्यारी होने लगी। दोनो वीज़ा लगवाने दिल्ली गए। इस उम्र में उन्हें आसानी से दस साल का वीज़ा मिल गया। छोटा बेटा शशांक व बहू शुचि ने भी उत्साह से अपनी शापिंग की लिस्ट भी भेजी। दोनो की शापिंग व डॉक्टरी जाँच में समय भागने लगा। नए चश्में बनवाए , दाँतों का चैक – अप करवाया। ढेरों दवाइयाँ एवम् मेडिकल इन्श्योरेन्स भी करवाई। ढलती उम्र में ना जाने कब कौन सी बिमारी आकर गले पड़ जाए। अमेरिका में सबसे मँहगा – डॉक्टरी इलाज ही है। बेटों ने उन्हें अच्छे से समझा दिया था। अपने रिश्तेदारों व नए मित्रों से शुभ – कामनाएं बटोरकर एवम् घर में एक चौकीदार रखकर वे चले गए। माँ–पिताजी के पहुँचने से शिवम् व सावी में मानो आत्मविश्वास आ गया। परदेस में अपनों के होने से बहुत सहारा होता है। वहाँ नौकर नहीं होते, सो घर का सारा काम माँ– पिताजी ने अपने जिम्मे ले लिया। नियत तिथि पर सावी ने एक चाँद सी ,स्वस्थ व सुन्दर बेटी को जन्म दिया। डिलीवरी नॉर्मल थी। परेशानी की कोई बात नहीं थी।

शशांक व शुचि भी दस दिनो के लिए वहीं पहुँच गए। नन्ही नीना को देखकर सब प्रसन्नता से झूम उठे। पहली बार नए नाम – –ममी–पापा,दादा– दादी, चाचा– चाची बोलकर सब अपना गौरव बढ़ाने लगे। हलुआ, पंजीरी ,बेसन के लड्डू से मुँह मीठे हुए। सावित्री को ऐसे समय में भारत याद आ रहा था। वहाँ नीना को देखने आने चालों का ताँता बँध जाना था। यहाँ तो शिवम् के गिने चुने दोस्त ही थे परीचित – जो आए थे। शशांक व शुचि के अति आग्रह करने से सवा महीना होने पर उनके पास जाने का प्रोग्राम बन गया। सावी को काम से तीन महीने की छुट्टी थी। उसे भी यह ठीक लगा। शशांक व शुचि ने उन्हें घुमाया फिराया और शॉपिगं करवाई। अब वे भी अपना परिवार बढ़ाएं ,ऐसी हिदायतें देकर वो दोनो सावी के काम पर जाने के पहले नीना को सँभालने वहाँ पहुँच गए। नन्ही नीना इतने लाड़ से पल रही थी कि कभी रोती नहीं थी। दादा– दादी उस पर जान छिड़कते थे। साढ़े पाँच महीने की नीना थोड़ा – थोड़ा बैठने लग गई थी। कमलनाथ और सुमित्रा का वीज़ा समाप्त हो चला था,वे बेहद उदास

मन से वापिस लौटे। अब सावी की माँ आ रही थी सो उसे सँभालने की चिंता तो नहीं थी अलबत्ता उनका मन नीना में अटका था। पोती का चेहरा उनकी आँखों के समक्ष से हटता ही नहीं था। खैर ,भारत पहुँचकर फिर नए सिरे से गृहस्थी की शुरूआत हुई। धीरे– धीरे वे दोनो पुराने ढाँचे में ढलने लगे कि तभी शशांक का फोन आया कि अब शुचि ख़बर सुनाएगी। दोनो ने खुशी से ईश्वर का धन्यवाद किया। ऊपरवाला जब देता है—छप्पर फाड़कर देता है। यही तो उनकी चाह थी। सावित्री फोन पर ही शुचि को सब समझाने लगी। फिर अमेरिका की तैय्यारी शुरू– – –फिर सब कुछ बंद। सावित्री इतने लम्बे सफर से घबराती थी। उसकी पीठ में दर्द हो जाता था। परन्तु ऐसे मौके पर जाना तो था ही।

सावित्री की दोनो बहुओं ने बच्चे का लिंग टेस्ट नहीं करवाया था। शुचि ने चाँद से बेटे को जन्म दिया। डिलीवरी नॉर्मल थी। 'वैभव' शशांक का ही रूप था एकदम। शिवम् सावी भी नीना को लेकर वहीं आ गए थे। अब तो सावित्री शिशु– पालन में पारंगत हो चुकी थी। नीना के जन्म के समय से ही उसने अमेरिकन तौर– तरीके अपना लिए थे। पोता पैदा होने पर उसका मन चाहा कि घर में ढोल बजे, नाच – गाना हो। लेकिन यह सब तो भारत में ही संभव था। 'वहाँ जाकर सब कुछ करेंगे; भार्गव साहब ने उसे तसल्ली दी। लड्डू भी बाँटेगें, अभी तो खिलाओ अपने बेसन के लड्डू। 'उनका घरौंदा बच्चों की किलकारियों से भर उठा था। बेहद प्रसन्न थे सभी। आती दिवाली को सब भारत में इकट्ठे दिवाली मनाएंगे, यही तय हुआ। दोनो बेटों के पास बारी– बारी समय बिताकर वे छ: महीने होते – होते भारत लौट आए थे।

दिवाली के पर्व पर भार्गव साहब ने अपने पोता व पोती का जश्न दिवाली के साथ ही मनाया। सब रिश्तेदारों व दोस्तों को न्यौता गया। खूब धूम–धाम हुई, नाच– गाना भी हुआ, साथ ही खुसरे भी नाचे। सब खुश थे। सवित्री ने पति से कहकर बहुओं को बढ़िया गहने व कपड़े बनवाकर दिए। बहुएं मायके गईं और बेटे जल्दी वापिस चले गए। शुचि तो सास को साथ लेकर अमेरिका गई जबकि भार्गव साहब एक महीने बाद सब कुछ सँभालकर उनके पास पहुँचे। अब तो यह आलम था कि दोनो बहुओं को माँ– पिताजी की हर समय आवश्यकता रहती थी। बेबीसीटर घर आए या उसके पास बच्चे को छोड़ा जाए। वो प्रति घंटे के हिसाब से पैसे लेती हैं व सरकारी तौर से रजिस्टर्ड होती हैं। बच्चे के खाने– पीने, सुलाने, साफ करने आदि का पूरा ध्यान रखती हैं। नौकरी करने वाली महिलाओं को मजबूरी में उन्हें काफी पैसा देना पड़ता है। अपने घर से कोई आकर साथ रहे और बच्चा सँभाले तो बहुत चैन , मानसिक शान्ति व सस्ता तो पड़ता ही है। बुर्जुग माता– पिता की विदेशों में बहुत माँग रहती है। फिर वो अपने बच्चों की प्यार से सेवा भी करते हैं— उन्हें गरमा गरम खाना खिलाकर व उनके घर का काम अपना समझकरके। मोह के फंदे में फँसे दादा–दादी या नाना– नानी को अपने पोतों– दोहतों के साथ रहना हम भारतीयों की तो कमजोरी भी है। 'मूल से ब्याज प्यारा होता है'—यह आम दृष्टिकोण है। सावित्री और भार्गव साहब भी तो इसी मिट्टी के बने थे।

एक साल के भीतर ही शुचि ने एक और पुत्र को जन्म दिया। दो पोते देखकर सावित्री में फिर से हिम्मत जाग उठी। प्रत्येक छ: महीने के भीतर उन दोनो को भारत वापिस जाना होता था। अभी वहाँ पहुँचकर वो थकावट भी नहीं उतार पाते थे कि बेटों के फोन बजने लगते थे, कि अब आ जाओ। बच्चे आपके लिए उदास हो रहे हैं। और बच्चों के मोह से वशीभूत वे पुन: इतना लम्बा सफर तय करके वहाँ पहुँच जाते थे। उनकी किस्मत पर सभी मित्र एवम् सम्बंधी भीतर ही भीतर जलन करते थे।

उसके अगले वर्ष नीना के भी भाई पैदा हुआ। नीना और नमन! शिवम् और शशांक दोनो के ही दो –दो बच्चे। परिवार पूर्ण हो गए थे। बच्चों को अकेले छोड़ नहीं सकते थे। शशांक ने शिवम् को फोन

किया कि वैभव बीमार है, माँ को भेज दो। शिवम् ने मौके की नज़ाकत को समझते हुए माँ से कहा कि पिताजी को हमारे पास रहने दें आप चली जाएं। माँ पल भर के लिए चौंक गई कि पिताजी को बच्चे सँभालना कैसे आएगा। भार्गव साहब बोले , "दूध की बोतल पिला देंगे नमन को ,हम पूरा ध्यान रख लेंगे।"बच्चों की सेवा में दोनो जुदा हो गए। सावित्री को पोते से मोह तो बहुत हो गया था, लेकिन पति को काम करना पड़ेगा—यह बात उसके गले नहीं उतर रही थी। सारी उम्र बहुत बड़े अफसर थे। उन्हें केवल सेवा करवाने की आदत थी। पीछे से सावी ने ठीक से खाने को न पूछा या कभी कुछ गुस्से में कह दिया तो उनको कैसा लगेगा— यह सोच सोचकर सावित्री का मन बेचैन रहने लगा था। अगले तीन महीने दोनो अलग- अलग ही रहे; क्योंकि वैभव के बाद शैशव भी बीमार पड़ गया था। शुचि अब और छुट्टी नहीं ले सकती थी। सावित्री बच्चों को बहुत प्यार से सँभालती व सारा घर देखती थी। माँजी के रहने से शुचि निश्चिंत थी। शुचि की अपनी माँ बहुत बीमार रहती थी, वो उन्हें कभी भी बुला नहीं पाई।

इधर सावित्री और भार्गव साहब का बच्चों के प्रति मोह प्रगाढ़ होता जा रहा था। मजबूरी में उन्हें छै: महीने बाद भारत वापिस जाना तो होता था, लेकिन वहाँ उनका मन कदापि नहीं लगता था। यह प्रेम की धारा सदैव आगे ही बढ़ती है। विवाह होते ही पिछले रिश्तों का महत्व घटने लगता है। औलद के आ जाने से मन उनमें रम जाता है, यही जीवन का क्रम है।

दादा दादी बच्चों को अंग्रेजी में हिन्दी मिलाकर कहानियाँ सुनाते थे, जिन्हें सुनकर बच्चे उनके दीवाने बने रहते थे। उनके भारत जाने पर उन्हें फोन करते थे कि जल्दी आ जाओ। दादा- दादी खुशी से फूले नहीं समाते थे। वे अपने पहचान वालों में बच्चों की बातें सुनाते व गर्व से बताते थे कि उनके पोते – पोती उनके बिना नहीं रहते हैं। नर्सरी स्कूल तक तो उनको भारत से जल्दी बुलाया जाता रहा । पिछले आठ सालों से यही क्रम चल रहा था। उन्हें एक महीने में ही वापिस बुलाने के फोन आ जाते थे। बच्चों की दिनचर्या अब सैट हो गई थी। सुबह ऑफिस जाते हुए मामा पापा छोड़ देते थे, वापसीमें ले आते थे। उधर सावित्री और भार्गव साहब का मन अब अपने बच्चों के अलावा और कहीं नहीं टिकता था। सावित्री पीठ –दर्द के कारण अब लम्बा चल नहीं पाती थी। वह व्हील –चेयर पर जहाज तक आती थी। इस बुढ़ापे में अब इन दोनो को भी बेटों की आवश्यकता थी, सहारे के लिए। अबकि जो वे भारत आए तो उन्हें महसूस हुआ कि उन्हें बुलाने का आग्रह किसी ने नहीं किया। फोन पर यही कहते कि अपना इलाज ठीक से कराओ। अच्छे डॉक्टर को दिखाओ। तबियत का ध्यान रखो। इधर यह आलम था कि सावित्री और भार्गव साहब ने कमरे में अपने चारों ओर बच्चों की फोटोस लगा रखी थीं। दोनो उनसे ही बातें करते व मन उदास करके बैठे रहते। सावित्री ने तो मन को रोग ही लगा लिया था। औरतें स्वभाव से ही अधिक भावुक होती हैं। उसे किसी से भी मिलना अच्छा नहीं लगता था। भीतर ही भीतर उसे यह पीड़ा खाए जा रही थी कि जिन बच्चों के लिए उन दोनो ने बुढ़ापे में दिन – रात एक कर दिया था: आज वो उनके बुढ़ापे से कन्नी काट कर बैठे हैं। इस आघात को सहना उसको भारी पड़ रहा था। वहीं वो जब एक दूसरे को देखते तो साथ रहने व बिछोह न देने की बात सोचकर मुस्कुरा पड़ते थे। दोनो डाल के पके फल थे कब..... ? आगे वो सोच नहीं पाते थे। मौसम की तरह जीवन के भी कितने बदलते रंग हैं। उन रंगों की बिसात में कौन से रंग गहरे चढ़ते हैं— यही तो जीवन की कसौटी है।

वीना विज 'उदित'